शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
E ISSN 2320 – 0871
17 फरवरी 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

रत्नकुमार सांभरिया की लघुकथाओं में दलित चेतना

मनोज सामा पाडवी (शोधार्थी)
कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय
नवापुर, जिला नंदुरबार
डॉ.आर.ए.माली (प्राचार्य)
अभय महिला महाविद्यालय, धुले
महाराष्ट्र, भारत

शोध संक्षेप

हिंदी में लघुकथा विधा की परम्परा अत्यंत समृद्धहै। आज मानवीय संवेदनाओं को संप्रेषित करने का सबसे सशक्त माध्यम लघुकथा है। कम से कम शब्द और वाक्यों में अपनी बात को पाठकों तक पंहुचाना किसी कौशल से कम नहीं है। वर्तमान में इसका प्रसार तीव्रता से हो रहा है। इसलिए यह सर्वाधिक लोकप्रिय भी है। आकार में लघु होने के बाद भी इसकी शक्ति का लोहा सभी साहित्यकारों ने माना है, बशर्ते यह लघुकथा चुटकुला न हो। इस विधा में रत्नकुमार साम्भरिया उभरता नाम है। उन्होंने समाज में अनेकानेक विसंगतियों का सूक्ष्म अवलोकन कर उसे अपने शब्दों में पिरोया है। भारतीय समाज में व्याप्त भेदभाव और अंधविशवास को लेकर उनके मन में एक बेचैनी है जिसे उन्होंने अपनी लघुकथाओं में अभिव्यक्त किया है। प्रस्तुत शोध पत्र में उनके लघुकथा संग्रह'बांग और अन्य लघुकथाओं का विश्लेषण किया गया है।

प्रस्तावना

आधुनिक युग गद्य का युग है। और इस युग में गद्य विभिन्न विधाओं के रूप में निरंतर विकसित होता है। लघुकथा हिंदी की नव्यतम विधा है जो इस समय सर्वाधिक लोकप्रियता प्राप्त कर रही है। हिन्दी साहित्य में लघुकथा का आविर्भाव अचानक नहीं हुआ, बल्कि इसके विकास की एक सुदृढ़ परंपरा दिखाई देती है। हिन्दी कहानी के विकास में हिन्दी की सबसे छोटी कहानी का उल्लेख इस प्रकार मिलता है, "रेल में यात्रा करते हुए सामने बैठे हुए यात्री से उसने कहा - 'तुमने भूत देखा है उसने कहा - 'नहीं' और वह गायब हो गया।" यह हिन्दी की सबसे छोटी कहानी मानी जाती है और इसे ही प्रथम लघुकथा भी मान सकते हें, जो उतनी ही पुरानी है, जितनी हिन्दी कहानी।

लघुकथाओं में संवेदना के स्वर

समकालीन लघुकथाकारों में रत्नकुमार सांभरिया का नाम तेजी से सामने आया है। उनकी कृति 'बांग तथा अन्य लघुकथाएं' के साथ इस संग्रह में उनकी 109 लघुकथाएं संगृहीत हैं। इस संग्रह से हम यह समझ सकते हैं कि रत्नकुमार सांभरिया की पकड़ लघुकथाओं के सृजन पर तो है ही, उसके सैद्धांतिक पक्ष पर भी उनकी राय स्पष्ट है। जिसके कारण उनकी लघुकथाएं चुटकुला बनने से बच पायी हैं। उनमें समकालीन यथार्थ की धारदार अभिव्यक्ति भी हुई है। रत्नकुमार सांभरिया की लघुकथाओं में धर्म,

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 फरवरी 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

दर्शन और राजनीति की स्थापित विसंगतियों पर भरपूर चोट देखने को मिलती है। मोटे तौर पर इसमें दो तरह की लघुकथाएं देखने को मिलती हैं। एक वह जिनमें हिंदू धर्म की मिथकीय मान्यताओं की बखिया उधेड़ी गयी है तथा दूसरी वे लघुकथाएं हैं, जिनमें भारतीय समाज में टूटते-बिखरते संबंधों पर उन्होंने बेबाक टिप्पणियां की हैं। इन लघुकथाओं में पशु-पक्षियों के माध्यम से और कभी सीधे-सीधे उन्होंने अपनी बात कही है। जैसे चींटियों को आटा खिलाकर या सांप को दूध पिलाकर अथवा पशु (गाय) को माता कहकर तथा पत्थर की पूजा करके हिंदू धर्म की उदारता का ढोल नित्यप्रति पिटा जाता है, लेकिन वहीं हिंदू मनुष्य अछूत के प्रति कितने निर्दय हैं, इसे उनकी लघुकथा 'कर्म' में देखा जा सकता है। इस लघुकथा का यह अंश देखें - "पंडिताइन ने होंठ बिचकाए, हाथ नचाया और चिनकी - बावली हुई है ? गो माता के बारे में ऐसी अधर्मी बात मत निकालना मुंह से कि मैं उनकी सेवा करती हुई साड़ी खराब कर लेती हूं कहे देती हूं।' चारे वाली चुप थी।

"तबीयत ठीक न होने के कारण मेहतरानी आज झाड़ने नहीं आ सकी थी। उसने दसवीं में पढ़ने वाली अपनी लड़की को भेज दिया था। लड़की धुली स्कूली ड्रेस पहने थी। वह झुककर आंगन की नालियां खींच रही थी। हवा में लहराती उसकी चुन्नी मटके से छू गयी। पंडिताइन की आंखें उस पर पड़ीं, तो वह क्रोध से झुलस गयी। उसने कपड़ा पीटने वाली लकड़ी उठा ली और लड़की की ओर फेंकी। निशाना चूक गया। डरी और सहमी लड़की वहां से भाग गयी। पंडिताइन ने मटके को उठाकर फेंक दिया और लड़की को अश्लील गालियां देने लगी।"1 किसी शूद्र को आदमी न समझना हिंदू धर्म के मूल में है तभी तो प्रतिभासंपन्न शूद्र छात्रों को मूर्ख सवर्ण अध्यापक अनुत्तीर्ण करके आज भी द्रोणाचार्य की भूमिका का निर्वाह कर रहे हैं। इस तथ्य पर रत्नकुमार सांभरिया ने अपनी लघुकथा 'द्रोणाचार्य जिंदा है' में इस प्रकार प्रकाश डाला है - "रामदीन! स्साला मोची का पूत! इतने अंक ले मरा कि पूरी कक्षा के सिर पर चढ़ बैठा। मेरे खुद के लड़के से ऊपर। गांव थूक कर चाट लेगा मुझे कि गुरुजी के लड़के से मोची का लड़का ज्यादा होशियार है, जिसका बुढ़ऊ बाप जूते सी कर उसे पढ़ा रहा है।"2

"गुरुजी ने अपनी आंखों से चश्मा उतारा, थोड़ी दूरी बनाकर उसके कांच देखे, पोंछे और पुनः चढ़ा लिया उन्होंने जेब से कलम निकाला और रामदीन के पर्चों का पुनर्मूल्यांकन करने में तल्लीन हो गए थे। छात्र रामदीन द्वारा प्राप्त अंकों में उन्होंने पर्याप्त संशोधन किया और नयी रिजल्ट शीट तैयार कर ली। अब उन्होंने ठंडी और गहरी सांस ली थी। परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने से रामदीन ने उत्तराधिकार के रूप में अपने बाप का पुश्तैनी धंधा संभाल लिया था।"3

धर्म और राजनीति के बीच अवैध संबंध से सांप्रदायिक उन्माद का जन्म हुआ, जिसके स्फुलिंग इस संग्रह की अधिकांश लघुकथाओं में दिखाई देते हैं। इस पुस्तक की शीर्ष लघुकथा 'बांग' का मुर्गा, मुर्गी के बार-बार कहने पर इसलिए बांग नहीं देता है कि अब सांप्रदायिक तनाव के कारण किसी को नींद ही नहीं आती। अतः अब उसे बांग देकर लोगों को जगाने की जरूरत नहीं रही। सांभरिया जानते हैं कि इस उन्माद को फैलाने वाले, यह एक सोची-समझी साजिश के तहत करते हैं। वे आदमी की लाशों की सीढ़ी बनाकर सत्ता के सिंहासन तक पहुंचना चाहते हैं। इस सच्चाई को उन्होंने अपनी लघुकथा

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 फरवरी 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

'हुकियाहट' में इस प्रकार अभिव्यक्त किया है, "थकीमांदी लेकिन लालायित लोमड़ी ने अपना एक बौद्धिक कौशल दिखाया। उसने जंगल में एक विचार बो दिया। उस विचार को लेकर सदियों से सौहार्द्रता की लड़ी में गूंथे सियारों में मारकाट मच गयी। एक दिन लोमड़ी को कुछ लाशें पड़ी मिल गयीं। लोमड़ी इन लाशों को अंगूर खा-खाकर मुटाती रही।"4 लेकिन सांप्रदायिकता फैलाकर कोई राजनीतिक दल इस देश की सत्ता को हथिया नहीं सकता। इस सत्य का परीक्षण विगत वर्षों में हो चुका है। इसका चित्रण 'रक्तबीज' में देखने को मिलता है। "भगवान ने पुजारी की ओर दांत किटकिटाए - "अरे पापी, मेरे इस पवित्र मंदिर को तूने राजनीति का अखाड़ा बना लिया है। चुनावी गतिविधियों की बागडोर अपने हाथ में ले ली है तूने धर्म और राजनीति को गड्डमड्ड कर दिा है। सत्ता में आने की तेरी यह स्वार्थवृत्ति और कुटिलता देखकर इतना झुलसा हूं कि मेरे समूचे शरीर पर फफोले पड़ गए हैं।' आप सत्य कहते हैं भगवान।' भगवान के चरणों में मस्तक रखकर पुजारी जोर-जोरे से रोने लगा। भगवान आग बबूला होकर पुजारी से बोले, "पुजारी, अब तू पुजारी नहीं रहा। माइक लगाकर भजन-कीर्तन की आड़ में चुनाव प्रचार करता है तू। लोग मेरे बारे में भी इधर-उधन की कहने लग गये हैं। अब मेरे यहां रहने का क्या प्रयोजन ? लेकिन याद रख, तेरी महत्वाकांक्षा कभी पूरी नहीं होगी।"5 इन लघुकथाओं में राजनीति के अपराधीकरण, पुलिस की गुण्डागर्दी, धर्म ना पर फैलाए जा रहे अंधविश्वास का तो चित्रण हुआ ही है, इसमें भारतीय समाज में दरकते हुए संबंधों की आहटें भी बहुत साफ सुनाई देती हैं। 'लाल आंसू' इसका सशक्त उदाहरण है। राधिका की मां के दोनों बेटे जब हवेली के अपने-अपने हिस्से लेकर अलग हो गए, तो उन्होंने राधिका को पत्र लिखकर बुलाया। भर्राए स्वर में बोली - "राधिक बेटी, यह गनीमत है कि तुम्हारे पापाजी हवेली के तीन टुकड़े कर गए। तुम्ळारे पोर्शन में रह रही हूं मैं, वरना ये दुष्ट तो मुझे बाहर ही पटक आते।' राधिका मां के पास बैठी हुई थी। चिबुक पर हथेली रखकर वह उधेड़बुन में डूबी रही। कांपते कंठ से कहने लगी - "मां अकेले जीवन को कितनी-सी जगह चाहिए ? कोई भी सौ-पचास रुपये किराये में दे देगा। अगर तुम नहीं चुका पाओगी, मैं चुका दिया करूंगी। सोचती हूं, अपने पास ही एक प्लाट खाली पड़ा है, उसे खरीद लूं जमीनों के भाव...। मां की आंखों से टपक रहे आंसुओं का रंग लाल हो गया था।"6

निष्कर्ष

कुल मिलाकर इस निष्कर्ष पर सहजता से पहुंचा जा सकता है कि रत्नकुमार सांभरिया में एक अच्छे लघुकथाकार की संभावनाएं मौजूद हैं क्योंकि वे अच्छी तरह जानते हैं कि उन्हें क्या कहना है। शब्द चयन और प्रभावान्विति के दृष्टिकोण से ये लघुकथाएं अप्रतिम हैं। संभवतः यह कहा जा सकता है कि सांभरियाजी क्षमतावान लघुकथाकार हैं। उनकी लघुकथाएं तेज धारवाले हथियार की तरह गंभीर घाव करती हैं। उनमें जीवन की समकालीन संवेदनशीलता भी है और आज की बर्बर स्थितियों को गहराई से स्पर्श करके झटके से प्रभाव छोड़ने की शक्ति भी है।

संदर्भ ग्रंथ

1 कर्म, बांग तथा अन्य लघुकथाएं रत्नकुमार सांभरिया, पृष्ठ 142

2 द्रोणाचार्य जिंदा है, बांग तथा अन्य लघुकथाएं रत्नकुमार सांभरिया, पृष्ठ 144

3 द्रोणाचार्य जिंदा है, बांग तथा अन्य लघुकथाएं रत्नकुमार सांभरिया, पृष्ठ 144

4 हु कियाहट बांग तथा अन्य लघुकथाएं रत्नकुमार सांभरिया, पृष्ठ 146

5 रक्तबीज, बांग तथा अन्य लघुकथाएं रत्नकुमार सांभरिया, पृष्ठ 147

6 लाल आंसू, बांग तथा अन्य लघुकथाएं रत्नकुमार सांभरिया, पृष्ठ 148